International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 1261-1262

बिहारी सतसई में हास्य एवं व्यंगय

पूनम
सहायक प्रवक्ता, कन्या महाविद्यालय, खरखौदा सोनीपत, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

हास्य और व्यंग्य दो भिन्न–भिन्न विधाएं हैं, परन्तु कई बार इन्हें एक दूसरे का पर्याय समझ लिया जाता है क्योंकि हास्य और व्यंग्य को एक योजक चिह्न से जोड़कर हम इनका साथ–2 प्रयोग करते हैं, लेकिन दोनों की पृथक सत्ता है, पहचान है। हास्य को साहित्य के अन्तर्गत एक रस की संज्ञा से अभिहित किया गया है और व्यंग्य को एक सषक्त विधा के रूप में स्वीकृति मिल चुकी है। हास्य मनुश्य को ईष्वर की अमूल्य देन है, क्योंकि मनुश्य के अतिरिक्त किसी अन्य प्राणी में यह प्रवृत्ति नंही मिलती। हास्य अथवा हँसी के न होने से मनुश्य का जीवन नीरस एवं षिथिल हो जाता है। अतः मानव जीवन में हास्य की महत्ता असंदिग्ध है। आज के इस तकनीकी युग में विज्ञान ने भी हास्य को एक अचूक औशधि के रूप में अपनाया है। प्रसिद्ध हास्य कवि काका हाथरसी का यह हास्य सूत्र जीवन का मूल मंत्र है–

भोजन आधा पेट कर, दुगुना पानी पीउ।
तिगुना श्रम, चौगुन हँसी, वर्श सवा सौ जीउ।।

'मानक हिन्दी कोष' में हास्य को इस प्रकार परिभाशित किया गया है– 'हास्य' हास सम्बन्धी, हास की। (काम की बात) जिसमें लोग प्रसन्न होकर हँस पडे, जिसमें लोगां को हँसाने की योग्यता या षक्ति हो। जिस पर लोग व्यंग्यपूर्वक हँसते हो। जिसकी हँसी उड़ाइ जाती हो या उड़ाइ जाए। उपहास के योग्य पात्र।''[1] आचार्य रामचन्द्र षुक्ल मानते हैं कि हास्य एक सुखात्मक भाव है जिसका प्रस्फुरण अचानक ही होता है। यह एक अस्थाई मानसिक दषा है। हास्य जितने वेग से आता है उतने ही वेग से वह षान्त हो जाता है। हास्य में आलम्बन का स्थान महत्त्वपूर्ण है। वे कहते हैं कि –''हास यों तो केवल मन का एक वेगमात्र है, पर भावों में जिस हास को स्थान दिया गया है, वह ऐसा है जिसके आश्रयगत होने पर श्रोता या दर्षक को भी रस रूप में हास की अनुभुति होती है। वह आलम्बन प्रधान होता है।''[2]

जब हम हास्य और मनोरंजन जैसे साधनों को जीवन के किसी महान उद्देष्य जैसे दार्षनिक विवेचन, षत्रुपक्ष की गतिविधियों सामाजिक क्रिया कलाप, राजनितिक संधर्श या जीवन व्यापार के अन्य क्षेत्र की गोपन और जटिल गतिविधियों से जोड़ देते हैं और रहस्य या शड्यन्त्र या त्रुटियों का उद्घाटन करते हैं और उसमें से मनोरंजक ढंग से बिना दुख पहुँचाए, किसी श्रेश्ठ पथ का अनुसंधान करते हैं, तब वहाँ तात्कालिक हर्श के अतिरिक्त कुछ बड़ा उद्देष्य हमारे समक्ष उपस्थित हो जाता हैं। हास्य में प्रायः प्रत्यक्ष भाशा का अथवा षब्द की लक्षणा, व्यंजना षक्ति और उसके अर्थ प्रयोग करने लगते है तब वहाँ हास्य से श्रेश्ठ व्यंगय और उपालंभ की मनोवैज्ञानिक स्थिति उत्पन्न हो जाती है। हास्य प्रायः व्यक्तिगत हुआ करता है किंतु व्यंग्य और उपालंभ व्यक्तिगत होते हुए भी सामाजिक सार्वभौमिक उद्देष्यों से अभिप्रेरित होता है, किन्तु इतना स्मरण रखना चाहिए कि व्यंग्य और उपालंभ की खेती हास्य की कृशि भूमि मे ही संभव है। 'संस्कृत हिन्दी कोष' के अनुसार व्यंग्य –''वि उपसर्गपूर्वक अञ धातु में यत् प्रत्यय लगाने से बना है जिसका अर्थ है– व्यंजना षक्ति द्वारा ध्वनित, परोक्ष संकेत द्वारा सूचित, 'ध्वनित अर्थ।''[3] व्यंग्य को अग्रेंजी में 'सेटायर' की संज्ञा दी गई हैं। व्यंगय सदैव ही एक सजग प्रहरी की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह समाज में निहित बुराईयों को भाशा की टेढी भंगिमा के साथ अभिव्यक्त कर देता है। व्यंगय में हास्य की उपस्थिति कम हो जाती है तब जब उसमें तीव्र आक्रोष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। 'श्री बेढ़व बनारसी' भी इस विचार से इंकार नही करते हैं कि– ''जब किसी व्यक्ति या समाज की बुराई या न्यूनता को सीधे षब्दों में न कहकर उल्टे या टेढ़े षब्दों में व्यक्त किया हो तब व्यंग्य की सृश्टि होती है।''[4] व्यंग्य एक प्रकार की आलोचना है, किन्तु जब व्यग्य में क्रोध आ जाता है, तब हास्य की मात्रा कम हो जाती है। व्यंग्य के अन्तर्गत हास्य की उपस्थिति उसे आधिक मारक बनाती है। व्यंग्य व्यक्ति एवं समाज की बुराईयों पर प्रहार करता है। व्यक्ति संबंधी बुराइयों के संदर्भ में ' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' की परिभाशा महत्त्वपूर्ण है। वे कहते है कि– ''व्यंग्य वह है, जहाँ कहने वाला अधरोश्ठ में हँस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो और फिर भी कहने वाले को जवाब देना अपने को और भी उपहासास्पद बना लेना हो जाता है।

बिहारी हिन्दी के रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि थे। इनका जन्म 1603 के लगभग ग्वालियर में हुआ। वे जाति के माथुर चौबे थे। उनके पिता का नाम केषवराय था। बिहारी की एकमात्र रचना 'सतसई' है। इसका एक एक दोहा हिन्दी साहित्य का एक–एक अनमोल रत्न माना जाता है। किसी कवि का यष उसके द्वारा रचित ग्रंथों के परिणाम पर नही गुण पर निर्भर होता है। अकेले सतसई ग्रंथ ने उन्हे हिंदी साहित्य में अमर कर दिया। सतसई के माध्यम से बिहारी की बहुज्ञता के दर्षन होते है। ''बिहारी के दोहों मे गागर में सागर भरने की अदभुत क्षमता है। बिहारी रचित सतसई में उनकी सूक्ष्म दृश्टि मिलती हैं।''[6] अपने काव्य गुणों के कारण ही बिहारी महाकाव्य की रचना न करने पर भी महाकावियों की श्रेणी में गिने जाते है। उनके संबंध में स्वर्गीय राधाकृश्ण दास जी की यह उक्ति बड़ी सार्थक है – यदि सूर सूर है, तुलसी षषी और उडगन केष्वदास है तो बिहारी उस पीयूश वर्शी मेघ के समान जिसके उदय होते ही सबका प्रकाष आछन्न हो जाता है। बिहारी सतसई के दोहो के बारे में कहा गया है–

सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखन में छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर।।

एक समय था जब व्यक्ति में इतनी उदारता थी कि वह किसी के

थोड़े ही गुणों पर रीझ कर मदद कर दिया करता था। आज मनुश्य कृपणता और संकुचित मानसिकता के कारण अपनी गुणग्राहकता का परिचय नहीं देता। यही प्रकृति आज भगवान की भी हो गई है। बिहारी श्री कृश्ण पर व्यंगय करते हुए कहतें है कि हे श्रीकृश्ण पहले तो आप थोड़े ही गुणों पर रीझ जाते थे, पर अब आपने वह प्रकृति भुला दी है। आप परम उदार होकर भी आजकल के कृपण दानियों के समान हो गये हो। आप भी अपनी गुणग्राहकता का परिचय नहीं दे रहें–

''थौरें ही गुन रीझते, बिसराई वह बानि।
तुमहूँ, कान्ह, मनौ भए आजकालिह के दानि।।''[7]

'पीनस' एक प्रकार का नाक का रोग है जिसमें रोगी को नाक में सुगन्ध दुर्गन्ध का अनुभव नहीं होता। कपूर वह पदार्थ है जिसमे षीतलता और सुगंध होती है। कवि का आषय है कि यदि पीनस रोग वाले व्यक्ति ने कपूर को षोरा (मिट्टी से निकलने वाला एक खारा पदार्थ) समझकर त्याग दिया है तो भी उसकी षीतलता और सुगंध की महिमा नहीं घटेगी। अर्थात् गुण के न जानने वाले के निरादर से पदार्थ के गुण की महिमा कम नहीं हेाती। यही यहाँ व्यंग्याभिव्यक्ति है–

''सीतलताऽरू सुबास कौ घटे न महिमा–मूरू।
पीनस वारैं जौ तज्यौ सोरा जानि कपूरू।।''[8]

कविवर बिहारी उन मनुश्यों पर अपनी व्यंग्याभिव्यक्ति करते हैं जो धन सम्पति के नषे मे चूर होते हैं। धतूरे से आई मादकता कुछ क्षणों की होती है, परन्तु धन सम्पत्ति की मादकता कभी नहीं उतरती। वे कहते हैं कि मादकता में कनक (सोना), कनक (धतूरे) से सौ गुना बढ़ जाता है, क्योंकि धतूरे को तो खाने से मनुश्य बौराता है पर सोने को पाने से ही मनुश्य बौरा जाता है–

''कनक कनक तैं सौगुनौं मादकता अधिकाइ।
उहिं खाऐं बौराइ इहिं पाऐं ही बौराइ।।''[9]

समाज में सज्जन मनुश्य वैसा सम्मान नहीं पाते हैं जैसा सम्मान दुश्ट प्रकृति के मनुश्य पाते हैं। अन्य लोग डर कर ही सही उन्हें ज्यादा सम्मान देते हैं। इसी पर बिहारी ने व्यंग्य किया है। वे कहते हैं कि ज्योतिश के अनुसार कुछ भले ग्रह होते हैं और कुछ बुरे ग्रह। बुरे ग्रहों के प्रभाव से बचने के लिए जप, दान आदि विधान किये जाते हैं। भले ग्रहों को षुभ परिणामदायक मानकर उनकी और ध्यान नहीं दिया जाता। यही मनोवृत्ति समाज में सज्जन एवं दुर्जन के प्रति भी है–

''बसै बुराई जासु तन, ताहि कौ सनमानु।
भलौ भलौ कहि छोडियै, खोटे ग्रह जपु दानु।।''[10]

कविवर बिहारी ने ज्योतिशों को भी अपनी हास्याभिव्यक्ति का पात्र बनाया है। पुत्र जन्म पर एक ज्योतिश जब उसकी कुंडली बनाने बैठै तो उन्हे इस बात का षोक हुआ कि पुत्र की कुंडली मे पितृमारक योग है, किन्तु जल्दी ही ज्योतिशी को यह जानकर प्रसन्नता मिली कि उनका पुत्र जारज संतान है–

''चित पितमारक–जोगु गनि भयौ, भयै सुत, सोगु।
फिरि हुल्स्यौ जिय जोइसी समुझैं जारज जोगु।।''[11]

कविवर बिहारी ने कौवे और षुक के माध्यम से इस बात पर व्यंग्य किया है कि समय के फेर के चलते कुछ समय के लिए अवगुनी और अज्ञानी व्यक्ति का भी सम्मान होता है। अपने उस क्षण भंगुर सम्मान से उसमें घमंड़ नहीं आना चाहिए। वे कहते हैं कि श्राद्ध पक्ष में षुक तो पिंजरे में प्यास से मर रहा है और बलिप्रदान के अवसर पर कौवे को बडे आदरपूर्वक बुलाया जाता है–

''मरतु प्यासा पिंजरा–पर्यौ सुआ समै कैं फेर।
आदरू दै दै बोलियतु बाइसु बलि की बेर।।''[12]

कवि बिहारी अपनी हास्य प्रवृत्ति का परिचय भी देते है। किसी कृपण की कृपणता पर हास्यात्मक अभिव्यक्ति करते हुए वे कहते हैं कि नई बहु को थुरहथी अर्थात् छोटे हाथों वाली जानकर उसे भिखारियों को कण देने का कार्य सौंपा। परंतु वह बहुत रूपवती थी कि उसके दर्षन के लिए सारा जगत ही उसके द्वार पर भिखारी बनकर आने लगा जिससे और भी अधिक अन्न लगने लगा–

''कन देबौ सौंप्यौ ससुर, बहू थुरहथी जानि।
रूप– रहचटैं लगि लग्यौ माँगन सबु जगु आनि।।''[13]

जमाई को उसकी उग्रता के कारण 'दसवाँ ग्रह' कहा जाता है, परन्तु जब जमाई घर जमाई बन जाता है तो उसकी वह उग्रता जाती रहती है। इसी बात पर व्यंग्याभिव्यक्ति करते हुए कविवर बिहारी कहते हैं कि पूस में दिन का मान इतना घट जाता है कि न तो उसमें उश्णता का तेज रहता है और न ही उसके आने जाने का ज्ञात हो पाता है। ठीक यही स्थिति घर जमाई की भी होती है। वहाँ न तो उसकी उग्रता बचती है और न प्रतिश्ठा–

''आवत जात न जानियतु, तेजहिं तजि सियरानु।
घरहँ जँवाई लौं घट्यौ खरौ पूस दिन मानु।''[14]

इस प्रकार हास्य और व्यंग्य के उपर्युक्त उदाहरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि 'बिहारी सतसई' के अन्तर्गत हास्य और व्यंग्य के अनेक स्थल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। समाज, भक्ति, नीति आदि से सम्बद्ध दोहों मे कविवर बिहारी की हास्य व्यंग्यमय अभिव्यक्तियाँ सुन्दर बन पड़ी हैं।

संदर्भ

1. मानक हिन्दी कोष, संपादक रामचन्द्र वर्मा (पांचवा खण्ड), पृ0 546
2. रस मीमांसा आचार्य रामचन्द्र षुक्ल, पृ0 195
3. संस्कृत हिन्दी कोष वामन षिवराम आप्टे, पृ0 983
4. नगरी पत्रिका श्री बेढब बनारसी (स्मृत्ति अंक) जनवरी 1969
5. कबीर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ0 164
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र षुक्ल पृ0 136
7. बिहारी रत्नाकर संपादक जगन्नाथदास रत्नाकर पृ. 55
8. बिहारी रत्नाकर संपादक जगन्नाथ दास रत्नाकर पृ0 52
9. वही, पृ0 104
10. वही, पृ0 180
11. वही, पृ0 262
12. वही, पृ0 202
13. वही, पृ0 147
14. वही, पृ0 97